International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 29-01-2019; Accepted: 28-02-2019
www.socialsciencejournal.in
Volume 5; Issue 2; March 2019; Page No. 140-141

असम के पारंपरिक नाट्य रूप अंकिया का वर्तमान स्वरूप

डॉ. कुमार गौरव मिश्रा
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, झारखंड केन्द्रीय विश्वविद्यालय, ब्राम्बे, रांची, झारखंड, भारत।

सारांश
अंकिया नाट असम का जनप्रिय पारम्परिक नाट्य रूप है। इसे वैष्णव नाटक भी कहा जाता है। वैष्णव नाटक का आर्विभाव सोलहवीं शताब्दी में मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन की स्निग्ध् छाया में हुआ। इसके आदि प्रणेता प्रसिद्ध वैष्णव संत श्री शंकर देव (1449-1557 ई.) को माना जाता है। उन्होंने समाज में उच्च नैतिक आदर्शों को लोकमंच के द्वारा प्रस्तुत किया। आज भी असम के ग्राम्य अंचलों में 'अंकिया नाट' श्रद्धा और भक्ति-भाव के साथ खेले जाते हैं। वर्तमान में अंकिया नाट के कथानक से लेकर प्रस्तुति स्वरूप में परिवर्तन हुआ है हालांकि अंकिया नाट का यह बदलाव अंकिया के मूल स्वरूप को संरक्षित करते हुआ।

मूल शब्द : असम, शंकरदेव, अंकिया, वैष्णव, नृत्य, नामघर, नाट्य, कृष्ण।

प्रस्तावना

'असम' शब्द संस्कृत के 'असोमा' शब्द से बना है, जिसका अर्थ है अनुपम अथवा अद्वितीय। लेकिन आज ज्यादातर विद्वानों का मानना है कि यह शब्द मूलरूप से 'अहोम' से बना है। ब्रिटिश शासन में इसके विलय से पूर्व लगभग छह सौ वर्षों तक इस भूमि पर अहोम राजाओं ने शासन किया। आस्ट्रिक, मंगोलियन, द्रविड़ और आर्य जैसी विभिन्न जातियां प्राचीन काल से इस प्रदेश की पहाडियों और घाटियों में समय-समय पर आकर बसीं और यहां की मिश्रित संस्कृति में अपना योगदान दिया। इस तरह असम में संस्कृति और सभ्यता की समृद्ध परंपरा रही है।

असम में शंकरदेव के बाद उनके शिष्य माध्वदेव ने न केवल अपने गुरुदेव की नाट्य परम्परा को कायम रखा, बल्कि, उसे विकसित करने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने असम प्रदेश के लोकप्रिय नृत्य शैली झूमरा पर आधरित नाटक लिखा। इनके नाटकों को झूमरा भी कहा जाता है।

"असम का इतिहास जटिल एवं रोचक है। शताब्दियों तक विभिन्न क्षेत्रों से आए सांस्कृतिक प्रभावों की जाने कितनी परतें उस पर चढ़ गयी हैं। कुछ क्षेत्र अवश्य इन प्रभावों से अछूते रह गए हैं, और इनेक संबंध में ठीक -ठाक काल निर्देश किया जा सकता है। पड़ोसी क्षेत्र मणिपुर की भांति ही असम की जनसंख्या में जंजातीय समुदाय और नगरवासी सम्मिलित है। घाटी में रालों से पर्वतीय जंजातियों का जो प्रथक्य ऊपर दिखाई देता है उसके बावजूद सभी समुदाय एक-दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं। साथ ही, पूर्व वैष्णव संस्कृति और वैष्णव संस्कृति के बीच अंतर स्पष्ट होते हुए भी दोनों में समान तत्व भी रहे हैं और विछिन्नता की बजाए अविछिनता की रेखाएँ ही दिखाई देती है। प्राचीन काल से ही असम में न केवल भारत की अपितु एशिया की अनेक जातियाँ, भाषायी वर्गों और संस्कृतियों का मिलन केंद्र रहा है। इस क्षेत्र के प्राचीनतम निवासी निषाद और किरात माने गए हैं, जिनका उल्लेख महाकाव्यों और पुराणों में मिलता है।"

अंकिया नाट असम का जनप्रिय पारम्परिक नाट्य रूप है। इसे वैष्णव नाटक भी कहा जाता है। वैष्णव नाटक का आर्विभाव सोलहवीं शताब्दी में मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन की स्निग्ध् छाया में हुआ। इसके आदि प्रणेता प्रसिद्ध वैष्णव संत श्री शंकर देव (1449-1557 ई.) को माना जाता है। उन्होंने समाज में उच्च नैतिक आदर्शों को लोकमंच के द्वारा प्रस्तुत किया। आज भी असम के ग्राम्य अंचलों में 'अंकिया नाट' श्रद्धा और भक्ति-भाव के साथ खेले जाते हैं।

आलोचक कलीराम मेधि 'अकावली' की भूमिका में असमिया नाट्य की उत्पत्ति के संदर्भ में लिखते हैं-

"असमिया नाट्य परंपरा संस्कृत नाटकों से अत्याधिक प्रभावित है। यह भी संभव है कि असमिया नाट्य उमापति कृत संस्कृत मैथली नाट्य से भी अनेक स्तरों पर भी परोक्ष रूप से संबंध हो। लेकिन इसकी उत्पत्ति का मूल स्रोत असमिया ओजापालि लोकनाट्य ही है। यह ओजापालि की सामूहिक प्रस्तुतीकरण की विशेषताओं से विकसित हुई है।"

माधवदेव ने पाँच नाटकों की रचना की, वे हैं- अर्जुन भंजन, चोरध्रा, पिम्पारा गुचुवा और भोजन विहार। इन नाटकों में से प्रथम और अन्तिम में माध्वदेव की कलात्मक तीक्ष्णता, प्रवेक्षण शक्ति और संयम के विशेष रूप परिलक्षित हुए हैं, इन नाटकों ने माधवदेव को कलाकार के रूप में प्रतिष्ठित किया। चोरध्रा और पिम्परा गुचुवा शिल्प-विधि की दृष्टि से तो नहीं किन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उनके सर्वाधिक सफल और लोकप्रिय नाटक हैं। श्री माधवदेव आजीवन ब्रह्मचारी रहे। शायद इसीलिए भी इनके नाटकों का विषय सिर्फ कृष्ण बाललीला से संबन्धित रहा।

माधवदेव के बाद 'गोपालदेव' ने आचार्यत्त्व ग्रहण किया। उन्होंने कृष्ण जन्म तथा नन्द के यहां उनके पहुँचाए जाने की कथा को लेकर जन्मयात्रा नामक नाटक लिखा। इसके अलावा इनके दो नाटक और हैं -नन्दुतात्सव और गोपी-उद्धव संवाद। बाद के दिनों में रामचरण ठाकुर, द्विजभूषण और दैत्यारी ठाकुर प्रभृति नाटककारों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया। इन लोगों ने भी अंकिया शैली में नाटक लिखे। इनमें कृष्ण-जीवन के विविध् प्रसंग प्रस्तुत किए गए हैं। ऐसा नहीं है कि 'अंकिया नाट' मंच पर कृष्णेत्तर विषय के नाटक नहीं रचे गए। कई नाटककारों ने राम और शिव लीला पर आधरित नाटक भी रचे, लेकिन अंकिया नाटकों में कृष्ण की लीला से संबन्धित नाटकों की प्रधानता सदा ही बनी रही।

गोपालअता को छोड़कर बाद की पीढ़ियों के बाकी किसी भी नाटककार ने

कला की उत्कृष्टता का कोई परिचय नहीं दिया। अपने पूर्ववर्ती नाटककारों की ही परम्परा में इन्होंने भी अपनी रचना के लिए पौराणिक आख्यानों को ही चुना किन्तु इनकी सर्वश्रेष्ठ कलाकृतियां भी पुनरावृत्तिपूर्ण और अनुकरणात्मक ही है। इन नाटकों में ब्रजबुलि की प्रधनता का स्थान बोलचाल की असमिया भाषा को मिल गया। लेकिन परम्परा की जीवन्तता और परिवर्तनशीलता के निर्वाह में इन नाटककारों ने कोई कसर नहीं छोड़ी।

इस काल के अन्य नाटककारों में रामचरण ठाकुर को समीचीन सफलता मिली। उनका एक ही नाटक उपलब्ध् है- कंस वध्, नान्दी श्लोक, भाटिमा और पयार जैसी तत्कालीन अन्य नाटकीय विशेषताओं को यदि छोड़ भी दे, जिनका प्रयोग उन्होंने किया, वो भी केवल शिल्पविधि की दृष्टि से तो यह नाटक शंकरदेव के सर्वोत्कृष्ट नाटकों के समकक्ष हैं। दैत्यारि ठाकुर के दो नाटक माने जाते हैं- नृसिंह यात्रा और स्यामन्त हरण। उनके समकालीन भूषणद्विज ने अजामलि-उपाख्यान नाटक लिखा। दैत्यारि-काव्यों प्रह्लाद चरित और स्यामन्तहरण का स्पष्ट प्रभाव है। फिर भी वे उनकी भद्दी नकल नहीं है। इन दो नाटकों में शकंरदेव के समय के अन्य वैष्णव नाटकों के विपरीत संवादों का स्थान गुण और परिणाम दोनों ही दृष्टि से प्रमुख और महत्वपूर्ण हैं।

भूषणद्वितज के अजामिल उपाख्यान में इस परम्परा और प्रतृप्ति का आरै भी विकास हुआ है तथा इसे पर्याप्त सपफलता भी मिली है। नाटकीय अभिव्यक्ति के लिए जब संवादों का प्रयोग अध्कि होने लगा, तब से एक प्रधान चरित्र के रूप में सूत्राधर का महत्त्व घट गया। यह भी इस काल की एक नवीनता ही थी।

इस काल के अन्य नाटकों में यदुमणि देव के फल्गूयात्रा, रामदेव के सुभद्राहरण, रुचिदेव के कुमारहरण, गोपाल के सीताहरण, दुर्वासाभेजन, तथा बलिचलन और पूर्णकान्त के सिंधु यात्रा का नाम लिया जा सकता है। फल्गू यात्रा नाटक एक चित्रावली के समान हैं, जिसमें फल्गू उत्सव के अवसर पर ब्रजधम की नारियों के साथ कृष्ण के भावावेश का चित्रण है। चूँकि शंकरदेव के केलिगोपाल में जो गोपबाला कृष्ण के विरह में तड़पती हैं, इसलिए कहा जा सकता है कि फल्गूयात्रा के द्वारा पहली बार राधा का असमिया वैष्णव साहित्य में प्रवेश हुआ। कथा प्रकरण संबंधी इन नवीनता की दृष्टि से यह नाटक महत्त्वपूर्ण है। सुभद्राहरण अर्जुन के द्वारा बलराम की बहन सुभद्रा का हरण जैसे पौराणिक आख्यान पर आधरित है। सम्पूर्ण नाटक, उसके संवाद और गीत ब्रजबुलि में है। गोपाल जैसे नाटककारों ने अपने सीताहरण, दुर्वासा भोजन आदि नाटकों में मुक्तावली छन्द का पहले पहल प्रयोग किया।

वैष्णव नाट्य परम्परा में दो प्रकार के अंकिया नाटक उपलब्ध् होते हैं। पहला अंकिया भओना जो शंकरदेव और उनके शिष्य माध्वदेव द्वारा रचे गए तथा इसमें संगीत की प्रधनता होती थी। दूसरा मातृभाषा नाटक जो माधवदेव के बाद के महन्तो ने लिखा तथा जिसमें ब्रजबुलि के स्थान पर असमिया भाषा आ गया और संगीत तत्त्व भी गौण होने लगे।

समय के साथ अंकिया के स्वरूप एवं शैली में भी बदलाव आया है, जो इस प्रकार है

- वर्तमान में अंकिया/भाओना में सह-अभिनय देखा जा सकता है। असम में भाषायी आंदोलन के दौरान यह सह-अभिनय अंकीय के नाट्य दृश्यों में शामिल हुआ।
- पूर्व में जहां अन्य नाट्य रूपों की तरह अंकिया में भी महिला पात्रों की भूमिका पुरुष निभाते थे वहीं वर्तमान में अंकीया में स्त्री, स्त्री पात्रों की भूमिका निभाती है। पारिजातहरण की सत्यभामा, राम-विजय की सीता, रुक्मणी-हरण की रुक्मणी का अभिनय स्त्रियाँ ही निभाती है क्यूंकी इन स्त्री पात्रों के बिना भाओना का प्रदर्शन नहीं किया जा सकता परंतु 1950 से पूर्व स्त्री पात्रों की भूमिका पुरुष ही निभाते थे।
- वर्तमान में अब अंकिया मुक्ताकाशी मंच से मंच पर प्रस्तुत होने लगा है साथ ही अंकीया की प्रकाश व्यवस्था भी बदली है। बिजली से चलने वाले कलिनग और गदुरा प्रयोग में देखने को मिलता है, जो भाओना को प्रभावित करता है।
- आज असम की प्रस्तुति वैश्विक स्तर पर कई क्षेत्रों में होने लगी है, जिसके करण असम की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के माध्यम से असम के बाहर का समाज असम के समाज, संस्कृति से परिचित है।
- आधुनिकता के प्रभाव में अंकिया में विभिन्न स्तर पर बदलाव देखने को मिलता है परंतु अंकिया का प्रस्तुति उद्देश्य आज भी वही है।
- अंकीया एवं भाओना में असम के हिन्दू समाज के पात्रों को सादृश्य रूप में दर्शाया जाता है उदाहरण के तौर पर सत्यभामा, नारद, परशुराम, श्री राम, श्री कृष्ण यह पात्र असम के हिन्दू समाज में हमेशा से चर्चित रहे हैं।
- असम के आम जनमानस से जुड़े रहने के लिए अंकिया की परंपरा का हमेशा जीवंत रहना आवश्यक है। आज असम में करीब पैंसठ सत्र हैं। इसके अतिरिक्त अंकिया के कलाकार न केवल असम बाँकी देश-विदेश में अंकीय की प्रस्तुति करते हैं।

संदर्भ

1. ओझा, दशरथ :हिन्दी नाटक :उद्भव और विकास,राजपाल एंड संस प्रकाशन दिल्ली, 2003
2. गार्गी,बलवंत :फोक थियेटर ऑफ इंडिया,युनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगटन,1966
3. दुबे, श्यामसुन्दर : पारंपरिक परम्परा, पहचान एवं प्रवाह, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, जगतपुरी दिल्ली, 2003
4. भारती, ओमप्रकाश, पारंपरिकयन: पारंपरिक कला रूपों पर एकाग्र', धरोहर, साहिबाबाद, 2007
5. भारती, ओमप्रकाश, 'पूर्वोत्तर भारत के पारंपरिक नाट्य, धरोहर, साहिबाबाद, 2011
6. माथुर, जगदीशचन्द्र,दशरथ ओझा : प्राचीन भाषा नाटक संग्रह
7. माथुर, जगदीशचन्द्र : 'परम्पराशील नाट्य',, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, 2006